E-CONTENT

कार्ल मार्क्स का वर्ग-संघर्ष का सिध्दान्त

प्रो.(डॉ.)सुरेन्द्र कुमार
विभागाध्यक्ष-इतिहास विभाग,
पटना विश्वविद्यालय, पटना-800005
Mobile No. 9835463960
E-mail ID: kumarsurendra850@gmail.com

वर्ग संघर्ष का सिद्धान्त

मार्क्स की वर्ग-संघर्ष की धारणा उसके चिन्तन की एक महत्वपूर्ण धारणा है। मार्क्स ने इतिहास की प्रेरक शक्ति भौतिक है। उसका मानना है कि उत्पादन प्रक्रिया के मानव सम्बन्ध इतिहास का निर्माण करते हैं। उत्पादन प्रक्रिया धनी और निर्धन (Haves and Have nots) दो वर्गों को जन्म देती है। प्रत्येक वर्ग एक दूसरे से संघर्ष करता रहता है। यही समाज की प्रगति का आधार है। इस तरह मार्क्स का वर्ग-संघर्ष का सिद्धान्त जन्म लेता है। उसकी यह धारणा इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या तथा अतिरिक्त मूल्य के सिद्धान्त पर आधारित है। उसने ऐतिहासिक भौतिकवाद की सैद्धान्तिक प्रस्थापनाओं के आधार पर साम्यवादी घोषणापत्र (Communist Manifesto) में कहा है कि-''आज तक का सामाजिक जीवन का इतिहास वर्ग संघर्ष का इतिहास है।'' सेबाइन ने भी उसकी पुष्टि करते हुए कहा है कि मार्क्स वर्ग-संघर्ष को ही सामाजिक परिवर्तन का माध्यम मानता है।

मार्क्स ने अपनी वर्ग-संघर्ष की धारणा 'आंगिस्टन थोरे' के दर्शन से ली है। इसलिए उसकी यह धारणा मौलिक नहीं है। फिर भी मार्क्स ने उसे एक व्यवस्थित व प्रामाणिक आधार प्रदान करके उसे विश्व राजनीतिक का प्रमुख तत्व बना दिया है। उसने वर्ग-संघर्ष की धारणा को तत्कालीन इंग्लैण्ड की तत्कालीन सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों पर आधारित किया है। उस समय इंग्लैण्ड में उत्पादन में अत्यधिक वृद्धि हो रही थी। पूंजीपति वर्ग दिन-प्रतिदिन अमीर होता जा रहा था और श्रमिक वर्ग निरन्तर निर्धन हो रहा था। श्रमिक वर्ग में वर्ग-चेतना का विकास हो रहा था और वह पूंजीपति वर्ग के शोषण को रोकने के लिए संगठित रूप में संघों का निर्माण कर रहा था। मार्क्स ने पूंजीपति वर्ग के अत्याचार व अन्याय से दु:खी श्रमिक वर्ग के कष्टों को देखकर एक कल्पना के आधार पर वर्ग-संघर्ष की धारणा को निर्माण किया और कल्पना के ही आधार पर पूंजीवादी समाज के अन्त तथा समाजवाद के उदय का स्वप्न देखा जो शोषण मुक्त समाज का प्रतिबिम्ब होगा।

वर्ग संघर्ष का अर्थ

मार्क्स ने वर्ग-संघर्ष की धारणा का उल्लेख अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'साम्यवादी घोषणापत्र' (Communist Manifesto) में किया है। उसने 'वर्ग' शब्द का प्रयोग विशिष्ट अर्थों में किया है। बुखारिन ने वर्ग को

परिभाषित करते हुए कहा है-''सामाजिक वर्ग व्यक्तियों के उस समूह को कहते हैं जो उत्पादन की प्रक्रिया में एक हिस्सा अदा करते हैं और उत्पादन की प्रक्रिया में लिप्त दूसरे व्यक्तियों के साथ एक ही सम्बन्ध रखते हैं।'' मार्क्स के अनुसार, ''व्यक्तियों का वह समूह वर्ग है, जो अपने साधारण हितों की पूर्ति हेतु उत्पादन की प्रक्रिया से जुड़ा हुआ है।'' अर्थात् जिस समूह के आर्थिक हित एक-से होते हैं, उसको वर्ग कहा जाता है। मार्क्स का कहना है कि समाज में सदैव ही दो वर्ग रहे हैं, जैसे स्वामी-दास, किसान-जमींदार, पूंजीपति-श्रमिक। संघर्ष को परिभाषित करते हुए मार्क्स ने कहा है कि संघर्ष का अर्थ केवल लड़ाई नहीं है बल्कि इसका व्यापक अर्थ है-रोष, असंतोष तथा आंशिक असहयोग। जब यह कहा जाता है कि वर्गों में अनादिकाल से सदैव संघर्ष होता रहा है तो इसका अभिप्राय यह होता है कि सामान्य रूप से असन्तोष औ रोष की भावना धीरे-धीरे शान्तिपूर्ण रीति से सुलगती रहती है और कुछ ही अवसरों पर यह भीषण ज्वाला का रूप ग्रहण कर लेती है।

वर्ग-संघर्ष सिद्धान्त की व्याख्या

मार्क्स ने इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या करके यह नियम बनाया कि आज तक का संसार का इतिहास वर्ग-संघर्ष का इतिहास है। विश्व इतिहास आर्थिक और राजनीतिक शक्ति के लिए विरोधी वर्गों में संघर्षों की शृंखला है। प्रत्येक काल और प्रत्येक देश में आर्थिक और राजनीति सत्ता की प्राप्ति के लिए किए गए संघर्ष इतिहास का अंग बन गए हैं। मार्क्स ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'कम्युनिस्ट मैनिफेस्टो' में लिखा है-''प्राचीन रोम में कुलीन, सरदार, साधारण मनुष्य तथा दास होते थे। मध्य युग में सामन्त, सरदार तथा जागीरदार, संघ स्वामी, कामदार, अपरेन्टिस तथा सेवक होते थे। प्राय: इन समस्त वर्गों में इनकी उपश्रेणियां भी होती थी। ये समूह दमन करने वाले तथा दलित निरन्तर एक दूसरे का विरोध करते थे। इनमें कभी खुलकर तथा कभी छिपकर निरन्तर संघर्ष चलता रहता था। प्रत्येक समय युद्ध के परिणामस्वरूप दोनों वर्ग नष्ट हो जाते थे।'' इस तरह समाज में युगों से दो वर्गों का अस्तित्व रहा है और उनमें संघर्ष भी निरन्तर होता रहा है। प्रत्येक वर्ग अपने हितों की पूर्ति के लिए संघर्ष के उपाय पर ही आश्रित रहा है। ऐसा वर्ग-संघर्ष आज भी पाया जाता है। आज यह संघर्ष अमीर-गरीब के बीच में है। आज उत्तर के विकसित देश दक्षिण के अविकसित देशों का शोषण कर रहे हैं और दोनों में विभाजन की खाई निरन्तर चौड़ी हो रही हैं आज अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर उत्तर-दक्षिण मतभेद वर्ग-संघर्ष का ही नमूना है।

मार्क्स ने वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्त को ऐतिहासिक आधार पर प्रमाणित करने के लिए, आदम युग से आज तक मानव सभ्यता के विकास पर नजर डाली है। मार्क्स कहता है कि आदिम युग में मानव की आवश्यकताएं सीमित थीं और वह कन्द, फल खाकर अपना गुजारा करता था। उस युग में व्यक्तिगत सम्पत्ति का लोप था। प्रत्येक वस्तु पर सांझा अधिकार था। सभी व्यक्ति प्रेम-भाव से रहते थे। आदिम साम्यवादी अवस्था थी। लेकिन यह व्यवस्था अधिक दिन तक नहीं चली। इसका स्थान दास-समाज ने ले लिया, इस युग में उत्पादन के साधनों पर शक्तिशाली व्यक्तियों का अधिकार हो गया और वे स्वामी कहलाए। कमजोर व्यक्ति दास कहलाए जाने लगे। व्यक्तिगत सम्पत्ति के उदय ने समाज में वर्ग-संघर्ष को

जन्म दिया। इस काल में समाज में दो वर्गों दासों व स्वामियों में संघर्ष तीव्र हो गया। स्वामी दासों का शोषण करने लग गए। इस युग में उत्पादन का प्रमुख साधन कृषि था। जब कृषि के साथ पशु-पालन भी शुरू हुआ तो सामन्तवादी युग का जन्म हुआ। इस युग में जनसंख्या बढ़ने से कृषि योग्य भूमि का भी विस्तार हुआ। अब सामन्त वर्ग ने सारी भूमि राजा से प्राप्त कर ली और उसके बदले राजा को हर सम्भव सैनिक व आर्थिक मदद देने का वचन दिया। इस तरह भूमि पर गिने चुने धनी व्यक्तियों का स्वामित्व हो गया और जनता का अधिकांश हिस्सा शोषित किसान वर्ग बन गया। जमींदारों (सामन्तों) ने किसानों का जमकर शोषण किया। उनकी दशा दासों के समान थी। लेकिन छोटे-मोटे उद्योग धन्धों की शुरुआत ने सामंतवादी व्यवस्था का भी अन्त कर दिया।

इसके बाद विज्ञान के आविष्कारों के परिणामस्वरूप उद्योगों के क्षेत्र में तीव्र उन्नति होने लगी और उद्योग धन्धों के विकास से समाज में पूंजीपति व श्रमिक दो वर्ग बन गए। जिनका उद्योगों पर पूर्ण नियन्त्रण था वे पूंजीपति कहलाए और जो कारखानों में काम करते थे, श्रमिक कहलाए। आज का संघर्ष पूंजीपति वर्ग व श्रमिक वर्ग का संघर्ष है। आज का युग पूंजीवाद का युग है। आज संघर्ष पहले की तुलना में आसान हो गया है। आज पूंजीवादी गुट व श्रमिक गुट एक-दूसरे के सामने पूरे जोर से डटे हुए हैं। यह संघर्ष पश्चिमी सभ्यता की देन है। मार्क्स ने इस संघर्ष का गहन विश्लेषण करके निष्कर्ष निकाला है कि पूंजीपति वर्ग अधिक से अधिक लाभ कमाने के उद्देश्य से श्रमिक वर्ग का शोषण करता है। श्रमिकों को मजदूरी कम दी जाती है और काम अधिक लिया जाता है। श्रमिक वर्ग अपने श्रम की पूरी मजदूरी प्राप्त करना चाहता है। इस तरह दोनों के हितों में टकराव होने लग जाता है। इस संघर्ष में श्रमिक वर्ग की स्थिति कमजोर होती है। श्रमिक को अपना तथा अपने परिवार का पेट भरने के लिए श्रम को सस्ते दामों पर बेचना पड़ता है। वह श्रम को अधिक दिन तक रोक नहीं सकता क्योंकि श्रम एक नाशवान वस्तु है। यदि वह श्रम को रोकता है तो उसे भूखा मरना पड़ता है। उसकी इस मजबूरी से पूंजीपति वर्ग भली-भांति जानता है। इसलिए वह उसे कम मजदूरी देकर उसका शोषण करता है। अत: श्रमिक पूंजीपति वर्ग के आगे झुक जाते हैं और पूंजीपति वर्ग कम वेतन पर उनसे काम कराता है। उनके श्रम का शोषण करके पूंजीपति वर्ग विलासपूर्ण जीवन व्यतीत करता है। पूंजीपति वर्ग अनी आर्थिक शक्ति के बल पर राजनीतिक सत्ता पर भी नियन्त्रण कर लेते हैं। धर्म जैसी सामाजिक वस्तु पर भी उनका ही वर्चस्व स्थापित हो जाता है। धर्म तथा राजनीतिक सत्ता का प्रयोग पूंजीपति वर्ग श्रमिक वर्ग का शोषण करने के लिए करता है। इस शोषण से मुक्ति पाने का एकमात्र उपाय वर्ग-चेतना है। जब श्रमिक वर्ग पूंजीपति वर्ग के संगठित अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठाने लगता है तो क्रान्ति होती है। लेकिन उचित उपायों के अभावों में प्राय: श्रमिक वर्ग अपनी राजनीतिक शक्ति के बल पर या धर्म का भय दिखाकर इस क्रान्ति या विद्रोह को दबा देता है। ऐसी क्रान्ति कभी-कभार ही सफल होती है। जब यह सफल होती है तो समाज में महान परिवर्तन होते हैं। सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक सम्बन्धों की पुर्नस्थापना होती

है। श्रमिक वर्ग का अधिनायवाद स्थापित होता है और कालांतर में शोषण मुक्त साम्यवादी समाज की रचना होती है। 1917 की रूस की तथा चीन की क्रान्ति इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

मार्क्स का महना है कि एक दिन पूंजीपतियों और श्रमिकों के संघर्ष में अन्तिम विजय श्रमिकों की होगी क्योंकि पूंजीवाद में उसके विनाश के बीज निहित हैं, मार्क्स ने पूंजीवाद के विनाश के कारणों पर प्रकाश डालते हुए कहा है-

1. **पूंजीवाद में व्यक्तिगत लाभ की दृष्टि से उत्पादन –** पूंजीवादी व्यवस्था में उत्पादन समाज के हित और उपभोग को ध्यान में न रखकर विशेष रूप से व्यक्तिगत लाभ के लिए होता है जिसके कारण समाज की मांग और उत्पादित माल (पूर्ति) में सन्तुलन खराब हो जाता है।
2. **पूंजीवाद में विशाल उत्पादन तथा स्वाधिकार की ओर प्रवृत्ति –** पूंजीवादी व्यवस्था में बड़े पैमाने पर उत्पादन एवं एकाधिकार की प्रवृत्ति पाई जाती है। जिसके कारण थोड़े-से व्यक्तियों के हाथों में पूंजी आ जाती है और श्रमिकों की संख्या बढ़ती जाती है। इस तरह पूंजीपति वर्ग अपने विनाश के लिए संघर्ष श्रमजीवी वर्ग को शक्ति प्रदान करता है।
3. **अतिरिक्त मूल्य पर पूंजीपतियों का अधिकार**–मार्क्स का कहना है कि पूंजीवादी व्यवस्था में उत्पादन का उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ कमाना होता है। इसलिए अतिरिक्त मूल्य को पूंजीपति श्रमिकों को न देकर अपने पास रख लेते हैं। जबकि न्याय सिद्धान्त की दृष्टि से इस पर श्रमिक का हक बनता है। यह अतिरिक्त मूल्य वह मूल्य है जो श्रमिक द्वारा उत्पादित माल की वास्तविक कीमत और उस वस्तु की बाजार कीमत (Market Price) के मूल्य का अन्तर होता है। पूंजीपति इस अतिरिक्त मूल्य को अपनी जेब में रख लेता है। इससे श्रमिकों का शोषण होता है।
4. **पूंजीवाद आर्थिक संकटों का जन्मदाता है –** मार्क्स कहता है कि पूंजीवादी उत्पादन प्रणाली समय-समय पर आर्थिक संकटों को जन्म देती हैं प्राय: उत्पादन श्रमिक वर्ग की क्रय शक्ति से अधिक हो जाता है। तब लाभ की कोई आशा न रहने से पूंजीपति उत्पादित माल को नष्ट करके माल का कृत्रिम अभाव उत्पन्न करते हैं और इस तरह अस्थायी संकटों को जन्म देते हैं। पूंजीवाद की इस प्रवृत्ति के कारण श्रमिक वर्ग एवं सामान्य जनता में घोर असन्तोष पनपता है जो पूंजीवाद द्वारा स्वयं ही अपने विनाश को बुलाना है। अर्थात् यह आर्थिक संकटों का जन्मदाता है।
5. **पूंजीवाद में व्यक्तिगत तत्व का अन्त –** मार्क्स के अनुसार पूंजीवादी व्यवस्था में श्रमिक के वैयक्तिक चरित्र का लोप होकर उसका मशीनीकरण हो जाता है। पूंजीपति श्रमिकों के व्यक्तित्व विकास के लिए कोई योगदान नहीं देते। वे उनको मशीनों का दास बना देते हैं। उसकी सृजनात्मक शक्ति का लोप हो जाता है, उसका जीवन निरन्तर पतन की तरफ जा रहा होता है। इस पतनावस्था का अन्त करने के लिए आखिरकार श्रमिक वर्ग में चेतना का उदय होने लगता है और पूंजीवाद के विनाश के बीज दिखाई देने लग जाते हैं।

6. **पूंजीवाद श्रमिकों की एकता में सहायक है –** पूंजीवादी व्यवस्था के दोषपूर्ण होने से श्रमिकों में असंतोष पैदा होता है। इससे वे छुटकारा पाने के लिए एकता का प्रयास करने लगते हैं। पूंजीवादी व्यवस्था में जहां अनेक उद्योग एक ही स्थान पर एकत्र होते हैं, वहीं उनमें लाखों काम करने श्रमिक भी आपस में अपने कष्टों के बारे में बातचीत करने लगते हैं। इससे दुःखों को दूर करने के लिए अर्थात् पूंजीपति वर्ग के शोषण से छुटकारा पाने के लिए संगठन बनाने की दिशा में प्रयास करने लग जाते हैं। इस तरह पूंजीवादी विकेन्द्रीकरण सुदृढ़ श्रमिक संगठनों को जन्म देता है और पूंजीवाद का प्रखर आवाज में विरोध शुरू हो जाता है।
7. **पूंजीवाद अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिक आन्दोलन का जन्मदाता है –** पूंजीवाद के दोष हर स्थान पर लगभग एक जैसे ही होते है। पूंजीवाद का तीव्र विकास विश्व के अनेक देशों को समीप लाता है। जब पूंजीवादी देश अपने उत्पादित माल को अपने देश में खपाने में असफल रहते हैं तो वे अन्य देशों में मंडियों की खोज करते हैं। इससे श्रमिकों से अन्य देशों के श्रमिकों से सम्पर्क करने का अवसर प्राप्त मिलता है। इस तरह श्रमिक राष्ट्रीय सीमाओं से बाहर निकलकर अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर गठित होने लग जाते हैं और श्रमिक आन्दोलन विश्वव्यापी रूप धारण कर लेता है। इस तरह मार्क्स का विश्वास है कि एक दिन विश्व में पूंजीवाद के खिलाफ एक अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर क्रान्ति होगी और पूंजीवाद का विनाश होकर उसके स्थान पर साम्यवादी समाज की स्थापना होगी। यही मार्क्स का यथार्थ स्वप्न है।

इस तरह मार्क्स ने पूंजीवाद के आंतरिक दोषों के कारण उसके विनाश का स्वप्न देखा। उसका विश्वास था कि श्रमिक वर्ग के संगठित होने पर सर्वहारा क्रान्ति द्वारा पूंजीवाद की जड़ें उखड़ जाएंगी और उसके स्थान पर श्रमिक वर्ग की तानाशाही स्थापित हो जाएगी। धीरे-धीरे पूंजीवाद के अन्तिम अवशेष भी समाप्त हो जाएंगे और एक वर्ग-विहीन समाज की स्थापना होगी। इस समाज में प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यतानुसार काम करेगा और समाज उसे योग्यतानुसार काम देगा, इसमें वर्ग-संघर्ष का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। क्योंकि वर्ग विहीन या साम्यवादी समाज की स्थापना के उपरान्त समाज में केवल श्रमिक वर्ग ही शेष बचेगा। पूंजीपति वर्ग का पूरी तरह सफाया हो जाएगा। मार्क्स ने कहा है-''साम्यवादी समाज की उच्चतर स्थिति में जबकि व्यक्ति श्रम-विभाजन की पतनकारी अधीनता से मुक्त हो जाएगा और जब उसके साथ ही बौद्धिक तथा शारीरिक श्रम का विरोध भी समाप्त हो जाएगा, जब श्रम जीवन का साधन ही नहीं बल्कि स्वयं जीव की सबसे बड़ी आवश्यकता बन जाएगा, जब व्यक्ति की समस्त शक्तियों के विकास से उत्पादन की शक्ति भी उतनी ही बढ़ सकेगी और सामाजिक सम्पत्ति के समस्त स्रोत प्रचुरता से प्रवाहित होने लगेंगे तभी पूंजीवादी औचित्य का सीमित क्षितिज पार किया जा सकेगा और समाज अपनी पताका पर यह अंकित कर सकेगा कि प्रत्येक अपनी योग्यता के अनुसार कार्य करें और प्रत्येक अपनी आवश्यकता के अनुसार प्राप्त करे।'' यही साम्यवादी समाज की स्थापना की स्थिति होगी।

वर्ग-संघर्ष सिद्धान्त की आलोचनाएं

1. **वर्ग की अस्पष्ट एवं दोषपूर्ण परिभाषा –** मार्क्स द्वारा दी गई वर्ग की परिभाषा के अनुसार आधुनिक समाज में मजदूरों और पूंजीपतियों के दो स्पष्ट वर्ग निश्चित नहीं किए जा सकते। आजकल उद्योगों में काम करने वाले अनेक मजदूर कम्पनियों के शेयर खरीदकर उद्योगों में हिस्सेदार बन जाते हैं और अतिरिक्त मूल्य के रूप में लाभ ग्रहण करने वाले पूंजीपति बन जाते हैं। इसी तरह उद्योगों के प्रबन्धकों को किस श्रेणी में रखा जाए? उन्हें न तो पूंजीपति वर्ग कहा जा सकता है और न ही मजदूर। सेबाइन ने कहा है कि-''मार्क्स के सामाजिक वर्ग की धारणा की अस्पष्टता उसकी भविष्यवाणी की कुछ गम्भीर गलतियों के लिए उत्तरदायी है।'' अत: कहा जा सकता है कि मार्क्स के 'वर्ग' की परिभाषा अस्पष्ट व दोषपूर्ण है।
2. **मानव इतिहास केवल वर्ग-संघर्ष का इतिहास नहीं है –** मार्क्स का यह कथन कि आज तक का मानव इतिहास वर्ग-संघर्ष का इतिहास है, थथार्थ स्थिति को स्पष्ट नहीं करता। इसमें सन्देह नहीं है कि इतिहस युद्धों से भरा पड़ा है। लेकिन ये सभी युद्ध वर्ग-संघर्ष की श्रेणी में नहीं रखे जा सकते। इनमें से अधिकतर युद्धों का उद्देश्य आर्थिक न होकर समान स्थिति वाले शासकों के बीच हुए हैं। प्राचीन व मध्ययुगीन के अनेक संघर्ष राजाओं के मध्य हुए हैं। डॉ0 राधाकृष्ण ने वर्ग-संघर्ष की अवधारणा की समीक्षा करते हुए कहा है-''इतिहास केवल वर्ग-संघर्ष का ही लेखामात्र नहीं है। शब्दों के युद्ध, वर्गों के युद्ध की अपेक्षा अधिक हिंसक और अधिक सामान्य रहे हैं। गत महायुद्धों में राष्ट्रीयता की भावना वर्गीयता की भावना की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली थी। इतिहास में शासक और शासित, उमीर और गरीब, सदैव ही अपने देश के शत्रुओं से एकमत होकर लड़े हैं। हम अपने देश के पूंजीवादी मालिकों की अपेक्षा विदेश के श्रमिकों से अधिक घृणा करते हैं। इतिहास में धर्म के नाम पर लड़ाईयां हुई हैं-पिछले युद्ध में मार्क्सवादी दो-चार अपवादों को छोड़कर अपने-अपने पूंजीवादी राज्यों की ओर से लड़े थे। भारत में हिन्दू-मुसलमानों की समस्या अथवा आयरलैण्ड में कैथोलिक और प्रोटेस्टेंटों की समस्या, वर्ग संघर्ष की समस्या नहीं है। अत: वर्ग-संघर्ष की अपेक्षा अन्य तत्वों राष्ट्रीयता, धर्म व संस्कृति ने भी इतिहास का निर्माण किया है।
3. **समाज में दो वर्ग मानना भूल है –** आलोचकों का कहना है कि समाज में केवल दो ही वर्ग नहीं होते। पूंजीपति व श्रमिक वर्ग के अतिरिक्त एक मध्यम वर्ग (बुद्धिजीवी) भी होता है। यह वर्ग समाज के विकास का मार्ग प्रशस्त करता है। समाज की प्रगति बुद्धिजीवी वर्ग पर ही निर्भर करती है। इसके अन्तर्गत इंजीनियर, वकील, डॉक्टर, अध्यापक व तकनीशियन आदि आते हैं। इस वर्ग की संख्या लगातार बढ़ रही है। इस वर्ग का होना मार्क्स के वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्त का खण्डन करता है। अत: मार्क्स द्वारा समाज का दो वर्गों में किया गया विभाजन गलत है। समाज में दो के स्थान पर कई वर्ग हैं।
4. **संघर्ष जीवन का मूल आधार नहीं है –** मार्क्स का कहना है कि संघर्ष जीवन का आधार है। इसी पर जीवन का अस्तित्व निर्भर करता है। किन्तु सत्य तो यह है कि संघर्ष की बजाय प्रेम, त्याग,

सहयोग, सहानुभूति, अहिंसा आदि के ऊपर सम्पूर्ण मानव समाज का अस्तित्व निर्भर करता है। आर्थिक क्षेत्र में भी संघर्ष की बजाय आपसी सहयोग व शांतिपूर्ण वातावरण में ही उत्पादन सम्भव है।

5. **क्रान्ति का नेतृत्व मध्यम वर्ग करता है –** मार्क्स का कहना गलत है कि श्रमिक वर्ग ही क्रान्ति का आधार होता है और भविष्य में भी सर्वहारा वर्ग ही क्रान्ति का बिगुल बजाएगा। सत्य तो यह है कि आज तक जितनी भी क्रान्तियां हुई हैं, उन सबका नेतृत्व बुद्धिजीवियों ने किया था, न कि श्रमिकों ने। लेनिन ने स्वयं इस बात को स्वीकार करते हुए कहा है-''हमने कहा था कि मजदूर लोग अब तक इस योग्य नहीं है कि उनमें समाजवादी चेतना उत्पन्न हो सके। उनके अन्दर यह चेतना केवल बाहर से ही लाई जा सकती है। सभी देशों के इतिहासों से प्रमाणित होता है कि अपने अनन्य प्रयत्नों से मजदूर वर्ग केवल मजदूर सभाई चेतना विकसित कर सकता है, जिसे समाजवादी मोड़ देने के लिए संगठित 'बौद्धिक दल' का अस्तित्व आवश्यक है।'' रुस और चीन की क्रान्तियों को सफल बनाने में लेनिन तथा माओ जैसे बुद्धिजीवियों की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण रही है।
6. **राष्ट्रीयता की भावना को कम महत्व देना –** मार्क्स ने कहा है कि समाज के सभी वर्गों में वर्गीयता की भावना ही सर्वाधिक प्रबल होती है। सत्य तो यह है कि राष्ट्रीयता की भावना वर्गीयता की भावना से ऊपर होती है। द्वितीय विश्वयुद्ध में धुरी राष्ट्रों (जापान, इटली व जर्मनी) की महत्वपूर्ण भूमिका वर्गीयता की अपेक्षा उग्र-राष्ट्रीयता की भावना पर आधारित थी। जर्मनी में यहुदियों पर हिटलर द्वारा किए गए अत्याचार वर्ग-संघर्ष का परिणाम न होकर हिटलर की जातीय-श्रेष्ठता की भावना का परिणाम था। युद्ध के समय एक देश के अन्दर ही पूंजीपति व मजदूर दोनों वर्ग एक जगह संगठित होकर दूसरे देश के पूंजीपतियों व मजदूरों का विरोध करने लगते हैं। इसके पीछे मुख्य कारण राष्ट्रवाद की भावना ही कार्य करती है।
7. **आर्थिक व सामाजिक वर्ग का अलग होना –** आलोचकों का कहना है कि सामाजिक और आर्थिक वर्ग एक न होकर अलग-अलग होते हैं। यद्यपि यह भी सम्भव है कि मार्क्स ने दोनों को एक मानकर उनका राजनीतिक दृष्टि से सही प्रयोग करने का प्रयास किया होगा। किन्तु उसका यह प्रयास अनेक त्रुटियों का जन्मदाता बन गया है।
8. **मार्क्स की भविष्यवाणी गलत साबित हुई –**मार्क्स ने भविष्यवाणी की थी कि एक दिन पूंजीवाद का अन्त होगा और उसके स्थान पर सर्वहारा वर्ग का अधिनायत्व स्थापित होगा। उसकी यह भविष्यवाणी गलत साबित हुई। आज अनेक पूंजीवादी देश तेजी से अपना विकास कर रहे हैं। वहां पर उनके श्रमिक वर्ग के साथ सम्बन्ध अच्छे हैं। आज अनेक पूंजीवादी देशों में मजदूरों की दशा तेजी से सुधर रही हैं वे मजदूरों को उचित वेतन देकर श्रमिक-असंतोष को कम कर रहे हैं। वहां पर निकट भविष्य में किसी संगठित श्रमिक आन्दोलन की संभावना नजर नहीं आ रही है।

रुस जहां पर श्रमिक तानाशाही द्वारा साम्यवाद की स्थापना हुई थी, वह भी टूटकर अधिक उदारवादी व्यवस्था की तरफ अग्रसर हो रहा है। आज उत्पादन प्रणाली में पूंजीपति वर्ग और श्रमिक वर्ग के अलावा तीसरा वर्ग (बुद्धिजीवी) भी तेजी से उभर चुका है। जर्मनी और इटली में पूंजीवाद का अन्त होने पर साम्यवाद के स्थान पर नाजीवाद व फासीवाद का विकास हुआ। ये दोनों विचारधाराएं साम्यवाद विरोधी थी। इस प्रकार मार्क्स का यह कथन असत्य सिद्ध हुआ कि वर्ग-संघर्ष के परिणामस्वरूप साम्यवाद की स्थापना होगी।

9. **यह सिद्धान्त हानिकारक है –** कैटलिन ने मार्क्स के वर्ग-संघर्ष के सिद्धान्त की आलोचना करते हुए कहा है कि यह सिद्धान्त आधुनिक कष्टों, दु:खों, रोगों और फासीवाद का जनक है। उसने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि-''मैं मार्क्स पर यह आरोप लगाता हूं कि उसने द्वन्द्वात्मक प्रतिक्रिया के द्वारा फासीवाद और संघर्ष को जन्म दिया है, जो बीसवीं शताब्दी के कई कष्टों का कारण है।'' लास्की ने भी कहा है-''पूंजीवाद की समाप्ति से साम्यवाद की अपेक्षा अराजकता फैल सकती है जिससे साम्यवादी आदर्शों से बिल्कुल असम्बन्धित कोई तानाशाही जन्म ले सकती है।'' इस प्रकार हम कह सकते हें कि मार्क्स का वर्ग-संघर्ष का सिद्धान्त अनेक कष्टों को जन्म दे सकता है। इसलिए यह हानिकारक सिद्धान्त है।

उपरोक्त आलोचनों के आधार पर कहा जा सकता है कि मार्क्स का वर्ग-संघर्ष का सिद्धान्त सही नहीं है। प्रो0 हंट ने इसे एक कल्पना कहा है। प्लैमनस्ज इसे विरोधाभासी सिद्धान्त का नाम देता है। यदि हम मार्क्स के इस सिद्धान्त को स्वीकार कर ले तो समाज में अराजकता फैल जाएगी और मानव-समाज संघर्षों का अखाड़ा बन जाएगा। दूसरी तरफ एक महत्वपूर्ण बात यह भी है कि मार्क्स की भविष्यवाणी गलत साबित हुई है कि पूंजीपति वर्ग का लोप हो जाएगा। यह भी आवश्यक नहीं है कि पूंजीवाद का अन्त होने पर साम्यवादी व्यवस्था ही स्थापित हो। केरयु हण्ट इसे वैज्ञानिक आधार पर मिथ्या मानते हैं। इस सिद्धान्त के आधार पर वर्ग-व्यवस्था का उचित विश्लेषण करना असम्भव है।

परन्तु अनेक कमियों के बावजूद यह सिद्धान्त इस व्यावहारिक राजनीतिक सत्य को प्रकट करता है कि यदि पूंजीवादी व्यवस्था के अन्तर्गत श्रमिकों का लगातार अमानवीय शोषण एवं क्रुर दमन होता रहेगा तो इस अन्यायपूर्ण स्थिति के अन्त के लिए श्रमिक वर्ग द्वारा उग्र वर्ग-संघर्ष के रूप में खूनी-संघर्ष या क्रान्ति का होना अनिवार्य है। वस्तुत: 19वीं सदी की उग्र एवं क्रुर पूंजीवादी व्यवस्था के प्रसंग में मार्क्स के वर्ग-संघर्ष का विशिष्ट महत्व था और उसके इन विचारों ने पूंजीवाद पर निरन्तर दबाव बनाए रखने का कार्य भी किया, जिसके परिणामस्वरूप पूंजीवादियों ने श्रमिक वर्ग के कष्टों की ओर ध्यान दिया और कल्याण की योजनाएं क्रियान्वित की। रुस में 1917 की सर्वहारा क्रान्ति की सफलता के बाद विश्व में मजदूरों और किसानों के सम्मान में वृद्धि हुई। इस प्रकार अनेक दोषों के बावजूद यह कहा जा सकता है कि मार्क्स के वर्ग-संघर्ष सिद्धान्त का अपना विशेष महत्व है।

For further reading:

1. C.L.Wayper — Political Thought
2. George H. Sabine — A History of Political Theory
3. Bertrand Russel — A History of Western Philosophy
4. Lancaster — Masters of Political Thought
5. R. Vaughan — A History of Political Thought
6. Robert L. Heilbroner — The Worldly Philosophers
7. Antonio Gramsci — Selections from Prison Notebooks
8. Louis Althuser — For Marx
9. D. MacLellan — The Thought of Karl Marx
10. Karl R. Popper — The Poverty of Historicism
11. Karl R. Popper — The Open Society & Its Enemies
12. John Tosh — The Pursuit of History
13. B.K.Jha — Pramukh Rajnitik Chintak Part-1&2
14. Gangadutt Tiwari — Pashchatya Rajnitik Chintakon Ka Itihas Part-1&2